Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 11, Issue 02, July-December, 2023
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2023

भारतीय रंगमंच में संगीत की प्रासांगिकता

DR. ASHOK KUMAR

Assistant Professor, Dept. of Music, D.S.B. Campus, Kumaun University, Nainital

शोध सार

रंगमंच संगीत एक नाट्य अवधारणा को नियंत्रित करने, बढ़ाने या समर्थन करने के लिए रचा गया है। नाट्य प्रयोजनों के लिए रचित संगीत कार्यक्रम या पारंपरिक आयोजनो के लिए संगीत की तुलना में विभिन्न कानूनों का पालन करता है। जबकि पारंपरिक आयोजनो में संगीत उस रूप को निर्देशित करता है जिसमें नाटकीय दृश्य की कल्पना प्रस्तुत की जाती है और इसके विकास को नियंत्रित करती है, अन्य प्रकार के रंगमंच में, टुकड़ा अपने प्रमुख तत्वों के बीच एक समान भागीदार होता है। रंगमंच में सदैव संगीत को समर्थन प्राप्त हुआ है। नाट्य प्रयोग में संगीत योजना रंगमंच की अपनी विलक्षणता रही है। इसलिये नाट्य में संगीत योजना इस कुशलता से हो कि दर्शन या अनुभव करें कि नाट्य के सृजन में संगीत भी एक महत्वपूर्ण माध्यम है1892 से 1978 तक भांगवाड़ी थियेटर में काम करने वाले कलाकारों, लेखकों और गायकों की उपस्थिति ही बताती है कि गायक और संगीत के बिना थियेटर सम्पूर्ण नहीं है। भारत में रंगमंच एक कथा के रूप में प्रारम्भ हुए स्वर, गायन और नृत्य रंगमंच के अभिन्न अंग बनाये गये। संगीत और रंगमंच एक दूसरे के पूरक हैं।

बीज शब्द- रंगमंच, नाट्य, संगीत, थियेटर, कलात्मक, दृश्य, मंच, पारंपरिक, नाटक, परंपरा

भूमिका

नाटक मानवीय संवेदनाओं को व्यक्त करने का सशक्त माध्यम रहा है और रंगमंच उन संवेदनाओं को प्रेषक तक पहुचने का एक योग्य माध्यम है। मानव की यह प्रवृत्ति हमेशा से रही है कि अपने भावों एवं विचारों को एक दूसरे तक पहुचाता है और रंगमंच की मूल आवधारणा भी यही है। रंगमंच जीवन की धटनाओं को सजीव रूप मे प्रर्दशित करता है। रंगमंच व्यापक और व्यवस्थित है। इसकी स्पष्ट व्याख्या भरत मुनि ने अपने नाट्य शास्त्र में की है। नाट्य शास्त्र को पंचम वेद भी कहा गया है। रंगमंच के उद्गम के विद्वानों द्वारा अलग-अलग मत माने गये हैं। चूँकि रंगमंच अपने आपमें एक परिपूर्ण विधा है इसलिए इसका विकास निरंतर होता रहा है। जब वेदों की रचना हुई तब तक रंगमंच अपने अस्तित्व में नही था। परन्तु भारत में रंगमंच आरम्भ के विषय में कहा गया है कि आदिकाल से रंगमंच की पारंपरिक व्यवस्था चलायमान रही है और विकसित हुई है। संगीत की रचना भी आदिकाल से मानी गयी है। इसमें गीत नृत्य और वादन, ये तीनों तत्व समाहित हैं और रंगमंच में इसका एक महत्वपूर्ण स्थान माना गया है। नाटक में संगीत का प्रयोग उसमें भावों को दृश्य के अनुसार निरूपित करता है। प्राचीन भारतीय ग्रंथों में नाट्य में वीणा वादन का उल्लेख मिलता है। भरतमुनि कहते हैं कि न ऐसा कोई ज्ञान है, न शिल्प हैं, न कोई ऐसी विद्या है न कला न योग और न ही कर्म जो नाट्य में न पाया जाता हो। वहीं भरत नाटक को यदि यज्ञ मानते हैं तो संगीत को उसका मंत्रोचार। संगीत को भरत ने एक सहस्त्र बार पवित्र नदी में स्नान करने या जंगल जप-तप कर्म से भी श्रेष्ठ माना है। इस प्रकार यह पूर्णतः स्पष्ट हो जाता है कि नाटकों में संगीत कितना आवश्यक है। नाटकों में अभिनय जहाँ किसी घटना या तर्क को बताने या प्रस्तुत करने हेतु आवश्यक है। संगीत वहीं वह वातावरण उत्पन्न करने में सक्षम है। भारत में रंगमंच के इतिहास पर दृष्टि डाले तो ऋग्वेद के सूत्रों में यम और यामि पुरुरवा और उर्वशी आदि के संवादों में नाटकियता, ध्वनि, संगीत दिखाई देता है, नाट्य कला का विकास दृष्टिगोचर होता है।[1]

भारतीय रंगमंच

भारत में रंगमंच में एक समृद्ध परंपरा है जो देश के प्राचीन अनुष्ठानों और मौसमी उत्सवों से निकटता से संबंधित है। भरत मुनि द्वारा लिखित नाट्य शास्त्र विश्व का सबसे प्राचीन नाट्य ग्रन्थ है, जिसमें नाटक के दस वर्गीकरणों का वर्णन किया गया है। भारतीय पौराणिक कथाओं के अनुसार प्रारंभ में नाटक देवताओं की असुरों पर विजय जैसे दिव्य प्रसंग में प्रदर्शित किया जाता था। भारत में रंगमंच एक कथा के रूप में प्रारंभ हुआ, जिसमें सस्वरपाठ, गायन और नृत्य रंगमंच के अभिन्न अंग बन गए। भारतीय कथाओं,

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 11, Issue 02, July-December, 2023
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2023

साहित्यों और कला के अन्य सभी रूपों को भौतिक रूप में प्रस्तुत करने के लिए रंगमंच का निर्माण किया गया। यह बात बहुत विस्मयकारी है कि 'नाट्यशास्त्र' में प्रतिपादित नाटकों में गीत और संगीत की जबर्दस्त भूमिका और निर्देशों के बावजूद स्वयं संस्कृत नाटकों में गीत-संगीत उतनी समृद्ध और सार्थक अवस्था में नहीं दिखलाई पड़ता कि लगे कि व्यावहारिक धरातल पर नाटक गीत-संगीत के बगैर निरर्थक है। "एक सिद्धांत के अनुसार भारत में सिकंदर महान के हमले के बाद ग्रीक सेना ने भारत में ग्रीक शैली के नाटकों का मंचन किया और भारतियों ने प्रदर्शन कला को आत्मसात किया। जबकि कुछ विद्वानों का तर्क है कि पारंपरिक भारतीय रंगमंच ने इसकी शुरूआत की थी। एक मान्यता है कि शास्त्रीय यूनानी रंगमंच ने इसे रूपांतरित करने में सहायता की है। 10वीं और 11वीं सदी में इस्लामी दौर शुरू हुआ, जिसने रंगमंचों को पूर्णतः हतोत्साहित किया। 15वीं से 19वीं शताब्दी तक बड़ी संख्या में यह पुनः क्षेत्रीय भाषाओं में विकसित किया गया। 17वीं शताब्दी में मेरठ में मुक्ताकाश नाट्य संगठन की स्थापना की गयी, जिसने तत्कालीन समाज की वास्तविकताओं को रंगमंच के माध्यम से प्रस्तुत करने का प्रयास किया। आधुनिक भारतीय रंगमंच ब्रिटिश साम्राज्य के अधीन औपनिवेशिक शासन के दौरान, 19वीं शताब्दी के मध्य से 20वीं सदी के मध्य तक विकसित हुआ।"[2] नाटक और रंगमंच सम्भवतः मनुष्य जाति का पहला और सदियों तक एकमात्र सशक्त एवं जीवन्त जन माध्यम रहा है। बदलते हुए समय और समाज के साथ-साथ इसके स्वरूप, सरोकार भी लगातार बदलते रहे। प्राचीन काल में शास्त्रीय रंगमंच राज्याश्रित था और लोक रंगमंच जनाश्रित था। मध्यकाल मुगल शासकों ने कलाओं के लगभग सभी रूपों का खूब विस्तार किया परन्तु अपनी धार्मिक मान्यताओं एवं सांस्कृतिक वर्जनाओं-मर्यादाओं के कारण, रूपक एवं रंगकर्म को मूर्तिपूजा के समक्ष मानकर] उन्होंने रंगमंच को पूरी तरह निराश्रित एवं उपेक्षित बना दिया। ऐसे संकट काल में नाटकों ने धर्मस्थलों की शरण ली और लीला-नाटकों का धार्मिक स्वरूप ग्रहण कर लिया। अंग्रेजों के आगमन के साथ इनके सेक्सपिरियन नाटकों से प्रभाव ग्रहण कर हमारा नाटक व्यवसायिक पारसी रंगमंच के रूप में विकसित हुआ तो उसकी कलाहीनता और प्रतिक्रिया में गम्भीर एवं सुसंस्कृत शौकिया रंगकर्म की शुरुआत हुई। आजादी के बाद पारसी-व्यवसायिक थिएटर के मुकाबले यह सार्थक गम्भीर एवं कलात्मक प्रोफेशनल एवं शौकिया प्रयोगशील रंगकर्म के रूप में विकसित हुआ। [3]

रंगमंच में संगीत की प्रासांगिकता

संगीत एक सर्वभौमिक कला है। संगीत का जन्म मानव के जन्म के साथ-साथ हुआ, प्रगति के कण-कण में संगीत विद्यमान है। सभी कलाओं में संगीत को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। कला मानव के विचारों को एवं भावों को व्यक्त करने का समृद्ध माध्यम है। ऐसे ही रंग संगीत का उद्देश्य मानव के विचारों एवं भावों को रंगमंच में प्रभावशाली रूप से दर्शाना होता है। रंगसंगीत में स्वर लय के माध्यम से भावनाओं को मंच पर दर्शाया जाता है। रंगसंगीत में संगीत की तीनों विधाओं का समावेश होता है और इन सभी विधाओं से रंगसंगीत पूर्ण विकसित होता है। रंगसंगीत का सम्बन्ध नाट्य से है। रंगसंगीत नाट्य के अभिन्न अंग के रूप में विद्यमान है। "संगीत भारतीय रंगमंच से नाभिनाल संबंध में रचा बसा रहा। संस्कृत नाटकों की परंपरा में कर्मकांडीय महत्त्व रखने के बाद जब उसका अवसान हुआ तब यही संगीत लोकनाट्य पंरपराओं में सजीव रहा। इसी लोक तत्त्व को पकड़कर भारतेंदु ने नवजागरण की ज्याति जलाई। प्रसाद जी की सांस्कृतिक चेतना जिस अभिजात्य शैली को लेकर चलती उसमें वह लोक की सजीवता के साथ शास्त्रीयता की गरिमा को पकड़ती है । मगर यहाँ भी संगीत अपने बदले हुए कलेवर में अपनी भूमिका निभाता है। पारसी रंगमंच में तमाम तड़क-भड़क को संगीत के माध्यम से ही साकार किया जाता है। उसकी उपयोगिता पर आप प्रश्नचिन्ह लगा सकते हैं किंतु प्रभावात्मकता पर नहीं। पृथ्वी थियेटर से लेकर इप्टा की जनवादी चेतना का उत्स और उनवान संगीत से होकर गुजरता है। अतः रंगमंच में संगीत की महत्ता असंदिग्ध है। बहस यदि हो सकती है तो केवल इसकी मात्र, प्रकृति और नियोजन को लेकर।"[4] रंगमंच का संगीत किसी भी शास्त्र में बंधा नहीं है रंगमंच में सभी तरह का संगीत उपयोग किया जाता है चाहे वह शास्त्रीय हो, चाहे लोक संगीत हो, पारसी संगीत हो, चाहे सुगम संगीत हो विदेशी पाश्चात्य संगीत हो या वाद्य यंत्रों या किसी भी वस्तु के घर्षण से उत्पन्न

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 11, Issue 02, July-December, 2023
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2023

ध्वनि हो सभी तरह का संगीत रंगमंच या नाट्य कला को सुसज्जित करता है। "रंग-संगीत रंगमंच का वह रूप है जिसमें नाटक के तथ्य को संगीत के माध्यम से व्यक्त किया जाता है। नृत्य नाटक की तरह रंग-संगीत को यर्थाथवादी नाटकों की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता क्योंकि वास्तविक जीवन में बातचीत कभी गाकर नहीं करते हैं। रंग-संगीत में संगीत-नृत्य रंगमंच की ऐसी विधा है जो बाहरी परिस्थितियों की आन्तरिक वास्तविकताओं से संबंध रखती है। रंग-संगीत का विस्तार और उसके गहनप्रभाव में शब्दों द्वारा गढ़े गए चरित्र अधिक समर्थ एवं क्षमतावान हो जाते हैं। रंग-संगीत में संगीत न तो पार्श्व में होता है और न केवल सहायक रूप में बल्कि इसमें संगीत का प्रयोग नाटक की प्रत्येक गति और कार्य के आगे-आगे होता है। संगीत के माध्यम से ही प्रत्येक चरित्र के मनोभाव और उससे जुड़े कार्यों की नाटकीय अभिव्यक्ति होती है"[5] कालिदास के नाटकों – मालविकाग्निमित्र, शकुन्तला आदि में गीत हैं अवश्य किंतु सांगीतिक निर्देश न के बराबर हैं। 'विक्रमोर्वशीयम' में अवश्य गीत और संगीत दोनों की सार्थक उपस्थिति है। इसके बाद सीधे मुरारी और राजशेखर तक जाकर हमें भरतोक्त ध्रुवा-गीतों के कुछ उदाहरण भर मिल जाते हैं। संस्कृत नाटकों में संगीत की ऐसी अनुपस्थिति हैरान करती है। शायद इसके पीछे गीत-संगीत को सवर्ण समाज में उच्च दर्जा न प्राप्त होना एक कारण हो, क्योंकि भरत ने भी जिन नाट्य प्रकारों – नाटिका, हल्लीसक, भाणिक आदि में गीत-संगीत की महत्ता को प्रतिपादित किया है वे भी प्रायः दोयम दर्जे के नाटक ही हैं। ऐसे में यदि संस्कृत नाटकों में गीत और संगीत की संकीर्ण स्थिति को संस्कृत रंगमंच के पतन का कारण माना जाए तो गलत ना होगा।[6] नाटक अपने कथ्य में और शिल्प में चाहे जितना उत्कृष्ट हो, अपने आलेख में वह अधूरा है। उसकी सार्थकता रंगमंच पर उसके प्रस्तुतीकरण से ही तय होती है। यानी नाटक लिखी जाने के साथ मंचित होने की कला है। ठीक ऐसे ही जैसे गीतों की सार्थकता संगीत से तय होती है।[7]

रंगमंच को विकसित करने में संगीत का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। जिस कारण रंगमंच में संगीत को एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। संगीत मानव की आवश्यक वृति है और रंगमंच में संगीत को नाट्य प्रस्तुति का अभिन्न अंग माना जाता है। संगीत के माध्यम से निर्देशक पात्र की स्थिति, परिस्थिति आदि का मंचन आसानी से दर्शकों के सम्मुख प्रस्तुत करता है। संगीत का प्रयोग रंगमंच की आवश्यकता एवं अपेक्षा के अनुरूप किया जाता है। निर्देशक संगीत को नाटक में सहायक सामग्री के रूप में प्रयोग करता है।[8] बलवंत गार्गी ने अपनी पुस्तक रंगमंच में नाटक में विद्यमान संगीत की उपयोगिता के बारे में कहा है कि संगीत में एक वृतांतक गुण होता है तथा एक ऐसी भाषा होती है जो संपूर्ण कहानी को बता सकती है।[9] यही गुण या ध्येय नाटक प्रस्तुति का भी होता है इसलिए अगर संगीत को नाटक में प्रयोग किया जाए तो उसका प्रभाव दुगुना हो जाता है। नाटक की प्रस्तुति में संगीत के द्वारा हर प्रकार के भाव दुःख, सुख, विरह, खुशी, क्रोध, विलास, संगीत के सुरों और ध्वनियां के सुमेल से प्रगटाये जा सकते हैं। नाटक में संगीत के द्वारा संचार मुख्यतः निम्नलिखित पांच प्रकार की संगीत योजनाओं द्वारा किया जाता है।[10]

- गीतों तथा वाद्यों का प्रयोग करके
- किसी विशेष रस का प्रभाव बढ़ाने के लिए उसके साथ मेल खाते वाद्यों को नैपथ्य में बजाकर। इसे पार्श्व संगीत भी कहा जाता है। इसका प्रयोग करुण और भयानक रस प्रधान नाटकीय दृश्यों में अधिक किया जाता है।
- रंगमंच के पीछे किसी विशेष प्रभाव के लिए घंटा, घड़ियाल, शंख, नगाड़े आदि वाद्यों का प्रयोग करके।
- रंगमंच पर ही गीत गाकर रंगपीठ के पात्रों को कोई सूचना देने या फिर विशेष प्रभाव डालने के लिए नैपथ्य में ही गीत गाकर
- रंगपीठ पर ही गाये जाने वाले गीत।

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 11, Issue 02, July-December, 2023
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2023

हिन्दी नाटक की प्रथम सांगीतिक कड़ी माना जाने वाला नाटक 'इन्द्रसभा' कदाचित् इन्हीं लोकनाट्यों और 'रहस' के गीत-संगीत से प्रभावित था जिसने नाटक की एक नयी तहजीब ही विकसित की।[11] "भारत दुर्दशा' की लावनी, 'नीलदेवी' की लावनी और गीत अपने उद्देश्य, शब्द रचना में भूलाए नहीं जा सकते। गीत, संगीत, अभिनय, कथ्य और चरित्र का जो संगठन 'भारत दुर्दशा' में है वह स्वतः स्फूर्त है। छंद बोलते हैं और हर प्रतीक परम छंद, लय मूर्त हो जाती है। 'अंधेर नगरी' ने तो रंगकर्म की भाषा का इतिहास ही अपनी समग्रता में रच डाला। लोकधर्मी चेतना ने भारतेंदु जी को मनोरंजन विरोधी भी नहीं बनाया। उनका संगीत कथानक, पात्र, वातावरण, समाज, जन कल्याण, रोचकता, कौतुक सबसे जुड़ा है।"[12] रंगमच में सगीत का महत्वपूर्ण स्थान है। संगीत के अभाव में आज हम एक उत्कृष्ट नाट्य प्रस्तुति की कल्पना नहीं कर सकते। संगीत मानव की स्वाभाविक वृति है और आधुनिक रंगमंच में तो संगीत नाट्य प्रस्तुति का अनिवार्य तत्व हो गया है। संगीत प्रभाव से नाटक का या निर्देशक पात्र की स्थिति, परिस्थिति आदि का बखूबी चित्रण दर्शकों के सामने प्रस्तुत कर देता है। वैसे तो संगीत, नृत्य, चित्र आदि स्वतन्त्र कलायें हैं परन्तु जब हम रंगमंच में इनका प्रयोग करते हैं तो वे रंगमंच की अपेक्षाओं की ही पूर्ति करते है और नाटक में निर्देशक या नाटककार उनका उपयोग एक वस्तु या सहायक सामग्री की तरह करता है। रंगमंच में उपयोग होने का इनका स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं रह जाता है।[13] रंगमंच में सदैव संगीत को समर्थन प्राप्त हुआ है। नाट्य प्रयोग में संगीत योजना रंगमंच की अपनी विलक्षणता रही है। इसलिये नाट्य में संगीत योजना इस कुशलता से हो कि दर्शन या अनुभव करें कि नाट्य के सृजन में संगीत भी एक महत्वपूर्ण माध्यम है। भरत ने यह माना है कि संगीत नाट्य की शैया है और इसके समुचित प्रयोग से नाट्य प्रयोग विपत्ति ग्रस्त नहीं होता है। उनका यह भी मत है कि जिस प्रकार चित्र की कल्पना विविध वर्णों के बिना नहीं हो सकती उसी प्रकार नाट्य में राग का उद्भव बिना गीत संगीत के नहीं हो सकता।[14]

यदि हम अपनी रामलीला का रंगमंच देखें तो राग-रागिनियों के बिना कुर्मांचली शैली की रामलीला के मंचन की कल्पना भी नहीं की जा सकती। नौटंकी हो या आधुनिक नाट्य संगीत इन शैलियों की आत्मा है। नुक्कड़ नाटकों की प्रस्तुतियों को ही देखें तो कोरस गायन को दृश्यों से जोड़ता है। कथानकों के बीच सेतु का कार्य करता है। अब तो हर मंच में नाटकों के प्रस्तुतीकरण में कोरस संगीत महत्वपूर्ण स्थान रखता है। उत्तर भारत की प्रतिष्ठित नाट्य संस्था युगमंच ने इस विषय में कई अभिनव प्रयोग किये हैं। भारतेन्दु हरीश चन्द्र के तीन नाटकों भारत दुर्दशा, वैदिकी हिंसा, हिंसा न भवति और अंधेरी नगरी को जोड़कर एक नाटक बनाया गया जिसका नाम ''नाटक जारी है'' है। हर युग में समाज में व्याप्त कुरीतियों का क्रम लगभग एक सा ही लगता है। हर युग को एक दूसरे के साथ क्रमबद्ध तरीके से जोड़ने हेतु संगीत सेतु का कार्य करता है। संगीत भी उत्तराखण्डी परिवेश की होलियों का समाहार है। कभी प्रतीत होता है कि नाटक हेतु संगीत उपयुक्त है और कभी ऐसा भी लगता है कि इन होलियों के कथानक हेतु मिलती-जुलती कहानियों तो नहीं ढूंढी गयी हैं। यह उदाहरण स्पष्ट करता है कि रंगमंच में सगीत एक-दूसरे के लिए अति आवश्यक है। एक दूसरे के पूरक हैं।[15]

निष्कर्ष

रंगमंच और संगीत का मूल एक है। इतिहास का अवलोकन करने पर यह स्पष्ट होता है कि दोनों का एक दुसरे के विकास में बुनियादी योगदान है। दोनों एक दुसरे से अनुस्यूत हैं। रंगमंच में संगीत को सदैव समर्थन प्राप्त हुआ है। नाट्य प्रयोग में संगीत योजना रंगमंच की अपनी विलक्षणता रही है। इसलिए नाट्य में संगीत योजना इस कुशलता से हो कि दर्शक यह अनुभूत करें कि नाट्य के सृजन में संगीत भी एक महत्वपूर्ण माध्यम है। संगीत नाट्य की शैया है और इसके समुचित प्रयोग से नाट्य प्रयोग विपत्तिग्रस्त नहीं होता। उनका यह भी मत है कि जिस प्रकार चित्र की कल्पना विविध वर्णों के बिना नहीं हो सकती उसी प्रकार नाटक में राग का उद्भव बिना गीत-संगीत के नहीं हो सकता है। आधुनिक रंगमंच ने कुछ समय के लिए जिस यथार्थवादी रंगमंच को उत्कृष्टता का पैमाना घोषित किया उसने कुछ समय के लिए ज़रूर संगीत और रंगमंच के बीच एक खास तरह की दूरी बनाई

किन्तु इतिहास के बड़े कलेवर में यह समय भी संगीत से शून्य नहीं रहा। व्यापक स्तर पर रंगमंच में संगीत की महत्त्वपूर्ण भूमिका हमेशा रही है और हमेशा रहेगी।

संदर्भ सूची

1. श्री हेमंत बिष्ट, लेखक, गीतकार एवं नाटककार नैनीताल से साक्षात्कार के माध्यम से
2. https://prarang.in/meerut/posts/3319/History-and-Development-of-Indian-Theater
3. डा0 राकेश कुमावत, शोध पत्र, परिमर्शए, Year-2, Vol-1, ISSN- 2395-4612
4. https://gunjankumarjha.com/ /रंगमंच-और-संगीत-इतिहास-के/
5. अनामिका सागर, शोध प्रबन्ध, भारतीय रंगमच में संगीतः एक महत्वपूर्ण इकाई, 2021
6. https://gunjankumarjha.com/ /हिन्दी-और-संगीत-इतिहास-के/
7. https://gunjankumarjha.com/ /रंगमंच-और-संगीत-इतिहास-के/
8. श्री हेमंत बिष्ट, लेखक, गीतकार एवं नाटककार नैनीताल से साक्षात्कार के माध्यम से
9. पं सीताराम चर्तुवेदी (1964), भारतीय तथा पाश्चात्यरंगमंच, हिन्दी समिति सूचना विभाग, लखनऊ (यू.पी.), पृ. 68
10. लक्ष्मी नारायण गर्ग (1981), कथक नृत्य, संगीत कार्यलय, हाथरस, पृ. 194
11. https://gunjankumarjha.com/ /रंगमंच-और-संगीत-इतिहास-के/
12. https://gunjankumarjha.com/ /रंगमंच-और-संगीत-इतिहास-के/
13. डॉ. राजेश कुमावत, आधुनिक हिन्दी रंगमंच में भरत कालीन संगीत की दशा और दिशा (अषाढ़ के एक दि के सन्दर्भ में) परिमर्श पत्रिका अंक 1 मार्च 2016 पृष्ठ 18
14. डा0 राजेश कुमावत, आधुनिक हिन्दी रंगमंच में भरत कालीन संगीत की दशा और दिशा (अषाढ़ के एक दि के सन्दर्भ में) परिमर्श पत्रिका अंक 1 मार्च 2016 पृष्ठ 18-19
15. श्री हेमंत बिष्ट, लेखक, गीतकार एवं नाटककार नैनीताल से साक्षात्कार के माध्यम से